
खेल घर

खेलघर

[बालक-बालिकाओं के पढ़ने योग्य चुनी हुई कविताएँ]

लेखक

श्रीनाथसिंह

प्रकाशक

दीदी कार्यालय

सुभाषनगर, इलाहाबाद-२

प्रथम बार } १००० } १९५८ { ४० न० पै०

भूमिका

सन् १६३० से, अथवा कहना चाहिये, उससे बहुत पहले से मैं बच्चों के लिये सरल कविताएँ लिखता आ रहा हूँ। कुछ कविताएँ अलग-अलग संग्रहों में प्रकाशित हो चुकी हैं; परन्तु बहुत सी अप्रकाशित पड़ी हैं। उन सबको प्रकाशित करना सम्भव नहीं है। अतएव उनमें से कुछ चुनी हुई यहाँ प्रकाशित की जा रही हैं। कुछ कविताएँ उपदेश-प्रद हैं, कुछ उत्साह वर्द्धक हैं और कुछ कोरी तुक बन्दियां हैं। परन्तु ये सभी कविताएँ ऐसी हैं जिन्हें, साहित्यिक समारोहों में मैंने बालकों के मुख से सुना है अथवा बालकों ने मेरे मुख से सुनना चाहा है। इसी से यह सोच कर कि ये सर्वप्रिय हैं, मैं इन्हें प्रथम बार पुस्तक रूप में प्रकाशित कर रहा हूँ।

ऐसी कविता पुस्तक का नाम खेलघर अजीब ज्ञान पड़ेगा परन्तु यह नाम इसलिये पसन्द किया कि ये कविताएँ बच्चों को खेल-कूद के समान ही प्रिय हैं और वे प्रायः इनकी पंक्तियाँ खेल कूद के समय गुनगुनाते हैं।

इलाहाबाद
१ सितम्बर, १६५८

श्रीनाथ सिंह

विषय-सूची

किरण का खेल

मेरे कमरे में सूरज की
एक किरण नित आती है।
जिसको पाती पास उसी
पर अपनी चमक चढ़ाती है ।।

लड़के होते हैं उदास
पर वह हरदम मुस्काती है।
चुपके से आँखें चमका कर
कानों में कह जाती है—

प्यारे बच्चे मुझसा ही है
चमकदार तेरा जीवन।
भारत माता सूरज सी है
तू है उसकी एक किरण।"

——

स्कूल में बरसात

झम-झम झम-झम पानी बरसा ।
कीचड़ खाना बना मदरसा ।।
पण्डित जी को भूला चन्दन ।
आज गये हैं कीचड़ में सन ।।

फिसले उधर मौलवी साहब ।
शकल बनी है उनकी बेढब ।।
गिरते पड़ते लड़के आये ।
क्लास रूम में कीचड़ लाये ।

उसमें फिसले बड़े मास्टर ।
मुश्किल से अब पहुँचेंगे घर ।।
लगी पाँव में भारी चोट ।
बिखरी स्याही बिगड़ा कोट ।।

  

मचा मदरसे में है शोर ।
लड़के बन गये मेंढक मोर ।।

बड़ा होने पर

मैं जैसे सुख से रहता हूँ
वैसे रहें पड़ोसी जन ।
कोई अति धनवान नहीं हो
कोई हो न बहुत निर्धन ।।

कन्ट्रोलों का नाम नहीं हो
होवे चोर बजार नहीं ।
कोई नंगा कोई भूखा
हो कोई बेकार नहीं ।।

लालच या भय के पिंजड़े का
कभी नहीं मैं कीर बनूँ ।
हे भगवान बड़ा होने पर
मैं जन-सेवक वीर बनूँ ।।

मक्खी की निगाह

कितनी बड़ी दीखती होंगी,
मक्खी को चीजें छोटी।
सागर-सा प्याला भर जल,
पर्वत सी एक कौर रोटी ॥

खिला फूल गुलगुल गद्दा-सा,
काँटा भारी भाला-सा।
ताला का सूराख उसे,
होगा बैरगिया नाला-सा ॥

हरे भरे मैदान की तरह
होगा इक पीपल का पात।
भेड़ों के समूह-सा होगा,
बचा-खुचा थाली का भात ॥

ओस-बूँद दर्पण-सी होगी,
सरसों होगी बेल समान।
साँस मनुज की आँधी-सी,
करती होगी उसको हैरान ॥

———

क्या

कड़ी धूप में निकले हैं तब
भूभल से घबराना क्या ?
सागर में जब कूदे तब
डूबे डूबे चिल्लाना क्या ?

दुनिया में जब आये हैं तब
दुःख से पिंड छुड़ाना क्या ?
आफत, चिन्ता, मौत, निराशा
से भगना भय खाना क्या ?

मिले सफलता या असफलता
इसमें मन उलझाना क्या ?
आगे कदम बढ़ा देने पर
पीछे उसे हटाना क्या ?

———

एक सवाल

आओ पूछें एक सवाल।
मेरे सिर में कितने बाल?
आसमान में कितने तारे?
क्यों समुद्र होते हैं खारे?

क्यों होता है कौवा काला?
मकड़ी कैसे बुनती जाला?
शहद कहाँ से मक्खी लाती?
पेड़ों पर क्यों कोयल गाती?

चमक कहाँ से तारे पाते?
बादल कैसे जल बरसाते?
बच्चे क्यों करते शैतानी?
बहुत उन्हें क्यों भाती नानी?

फूल कहाँ से पाते रंग?
चौबे जी क्यों खाते भंग?
बोलो कुछ तो भाई बोलो।
सोच समझ करके मुँह खोलो।

———

सीखो

फूलों से नित हँसना सीखो,
भौंरों से नित गाना।
तरु की झुकी डालियों से नित,
सीखो शीश झुकाना॥

सीख हवा के झोंकों से लो,
हिलना जगत हिलाना।
दूध तथा पानी से सीखो,
मिलना और मिलाना॥

सूरज की किरणों से सीखो,
जगना और जगाना।
लता तथा पेड़ों से सीखो,
सब को गले लगाना।

वर्षा की बूँदों से सीखो,
सब से प्रेम बढ़ाना।
मेंहदी से सीखो सब ही पर,
अपना रंग चढ़ाना॥

मछली से सीखो स्वदेश के
लिए तड़प कर मरना।

पतझड़ के पेड़ों से सीखो,
दुख में धीरज धरना ॥

दीपक से सीखो जितना,
हो सके अँधेरा हरना।
पृथ्वी से सीखो प्राणी की।
सच्ची सेवा करना ॥

जल-धारा से सीखो आगे,
जीवन-पथ में बढ़ना।
और धुँवे से सीखो हरदम,
ऊँचे ही पर चढ़ना ॥

सत्पुरुषों के जीवन से,
सीखो चरित्र निज गढ़ना।
तथा प्रेम से सीखो बच्चो!
इन पद्यों का पढ़ना ॥

———

नानी का कम्बल

(१)

नानी का कम्बल है आला।
देख उसे क्यों डरे न पाला ॥
ओढ़ बैठती है जब घर में,
बन जाती है भालू काला ॥

(२)

रात अँधेरी जब होती है।
ओढ़ उसे नानी सोती है ॥
तो मैं भी डरता हूँ कुछ कुछ,
मुन्नी भी डर कर रोती है ॥

(३)

पर बिल्ली है जरा न डरती।
लखते ही नानी को टरती ॥
चुपके से आ इधर-उधर से,
उसमें म्याऊँ म्याऊँ करती ॥

(४)

कहीं मदारी यदि आ जाये।
कम्बल को पहिचान न पाये ॥
तो यह डर है डम-डम करके,
पकड़ न नानी को ले जाये ॥

———

बना दो

गंगा सा निर्मल जीवन हो
अटल हिमालय-सा हो ध्यान।
काम सदा तन आवे सब के
मन में हो स्वदेश का मान॥

सुख में दुख में एक सरीखी
होठों पर हो मृदु मुस्कान।
हे भगवान! बना दो हमको
ऐसा कोई मनुज महान।

———

पूसी और मूसी

लल्लू ने इक बिल्ली पाली।
जिसकी पीठ बहुत थी काली॥
पूसी उसका नाम पड़ा था।
आदर उसका बहुत बड़ा था॥

दूध मलाई खाती थी वह।
चूहे नहीं चबाती थी वह॥
एक रोज जब सूना घर था।
कोई नहीं रहा अन्दर था॥

कुर्सी पर जा बैठी पूसी।
औ यह लिखा—"प्रिय सखी मूसी॥
ऊब रही मैं यहाँ अकेली।
तू है मेरी सुघड़ सहेली॥

चिट्ठी पढ़ते ही चल देना।
साथ किसी को किन्तु न लेना॥
हम दोनों खेलेंगी सुख से।
म्याऊँ-म्याऊँ करके मुख से॥"

समाचार पा मूसी आई।
थी वह लेकिन भूखी भाई॥

बोली—"चूहे हों तो लाओ।
पहले मेरी भूख भगाओ॥"

पूसी बोली—"म्याऊँ-म्याऊँ।
बहन तुझे मैं क्या बतलाऊँ॥
यह पापी पंडित का घर है।
यहाँ माँस खाने में डर है॥

हाँ पर होगी दूध-मलाई।
रक्खी होगी खीर चलाई॥
चलो वहीं कुछ खावें दोनों।
खाकर पेट फुलावें दोनों॥

क्या था, दूध दही के घर में।
जा पहुँचीं दोनों छिन भर में॥
औ आले के पास पहुँच कर।
घात लगा कर मौका पाकर॥

लिया खीर से भरा कटोरा।
दोनों ने उसमें मुँह बोरा॥
सच है पढ़ी लिखी थी पूसी।
पर बिलकुल गँवार थी मूसी॥

धीरज छोड़ लगी वह खाने।
चढ़ी कटोरे पर अनजाने॥
भरा कटोरा उलट गया तब।
मूसी का तन भीग गया सब॥

बस भागी वह खीर चुआती।
बहुत-बहुत मन में पछताती॥
तब तक आ पहुँचा घरवाला।
देख खीर का खाली प्याला॥

पूसी पर कोड़े बरसाया।
क्योंकि उसी को घर में पाया॥
मूसी को न किसी ने देखा।
या देखा तो मन में लेखा॥

यह है कोई खीर कुमारी।
शकल बिल्लियों से है न्यारी॥

———

बालक की कामना

मैं स्वतन्त्र भारत का वासी
काम करूँगा सदा वही
जिससे सम्मानित हो जग में
यह ऋषियों की पुण्य मही

मन में तो है यही गाँव में
बसूँ करूँ मैं गोपालन
दूध दही की गंगा उमड़े
हृष्ट पुष्ट हों भारत-जन

और अन्न उपजाऊँ इतना
इतनी पैदा करूँ कपास
कोई रहे न भूखा दूखा
कोई रहे न बिना लिबास

काम पड़े तो बसूँ शहर में
सीखूँ विविध कला कौशल
बना बना गाँवों में भेजूँ
नये यन्त्र औ नूतन हल

सरकारी नौकरी करूँ तो
करूँ घूस की आस नहीं
अनाचार या चोर बजारी
के मैं जाऊँ पास नहीं

काम सभी मैं सीखूँ, सीखूँ
अस्त्र शस्त्र संचालन भी
भारत की सेवा में कर दूँ
अर्पण तन मन प्राण सभी

————

नानी का सन्दूक

नानी का सन्दूक निराला,
हुआ धुंवे से बेहद काला।
पीछे से वह खुल जाता है,
आगे लटका रहता ताला।

चन्दन चौकी देखी उसमें,
बेसन लौकी देखी उसमें।
बाली जौकी देखी उसमें,

खाली जगहों में है जाला।
नानी का सन्दूक निराला।

शीशी में गंगा जल उसमें,
चींटी झींगुर खटमल उसमें।
ताम्र-पत्र तुलसी दल उसमें,

जगन्नाथ का भात उबाला।
नानी का सन्दूक निराला।

मिलता उसमें कागज कोरा,
मिलती उसमें सुई व डोरा।
मिलता उसमें सीप कटोरा,

मिलती उसमें कौड़ी माला।
नानी का सन्दूक निराला।

जब लड़कों को खाँसी आती,
आती उसमें निकल दवाई।
कभी ढूँढ़ने से मिल जाता,
पेड़ा बर्फी गट्टा लाई।

जो कुछ खाकर मरना चाहे,
ढूँढ़े उसमें जहर धतूरा।
डर है चोर न उसे चुरा लें,
समझो उसे 'म्यूजियम' पूरा।

उसको छोड़ न लेगी नानी,
दिल्ली का सिंहासन आला।
नानी का सन्दूक निराला।

———

सुन्दर पास, पड़ोस बनाओ

देखो क्या कहती हैं कलियाँ
हर दम हँसो और मुसकाओ ।
रहो सदा तुम सब के प्यारे
सुन्दर पास पड़ोस बनाओ ।

देखो क्या कहती हैं नदियाँ
हर दम आगे बढ़ते जाओ ।
शीतल करो सदा सब ही को
सुन्दर पास पड़ोस बनाओ ।

देखो क्या कहते तरु पौधे
तुम ऊपर को उठते जाओ ।
हरा भरा मन रक्खो अपना
सुन्दर पास-पड़ोस बनाओ ।

देखो क्या कहता है दीपक
अन्धकार से मत घबराओ ।
जब तक दम में दम बाकी हो
सुन्दर पास पड़ोस बनाओ ।

———

मुन्नी की हैरानी

बाबू बन कर मुन्नी बैठी ।
ऐनक लगा शान में ऐंठी ॥
गुड़िया को झट लगी पढ़ाने ।
रोब मास्टरी का दिखलाने ॥

तब तक उसकी अम्मा आई ।
लीला देख बहुत झल्लाई ॥
हाथ पकड़ कर पीटा उसको ।
खींचा और घसीटा उसको ॥

लेकिन मुन्नी समझ न पाई ।
क्यों इतना अम्मा झल्लाई ॥
बोली आँखों में भर पानी ।
बाबू जी करते शैतानी ॥

ऐनक रोज लगाते हैं वे ।
मुझको रोज पढ़ाते हैं वे ॥
उनको कभी न कुछ कहती हो ।
देख देख भी चुप रहती हो ॥

मुझको ही क्यों पीटा पकड़ा।
लेकर एक बड़ा सा लकड़ा ॥
सुन बेटी की बातें भोली।
माँ की बुझी क्रोध की होली ॥

प्यार किया चुमकारा उसको।
कभी नहीं फिर मारा उसको ॥

बच्चो ! मेरा प्रश्न बताओ

सोच रहा हूँ क्या बन जाऊँ तो अति आदर पाऊँ।
करूँ कौन सा काम कि जिससे बेहद नाम कमाऊँ ॥

अगर बनूँगा गुरू-मास्टर डर जायेंगे लड़के।
पड़ें रोज बीमार—मनायेंगे वे उठकर तड़के ॥
कहता बनकर पुलिस-दरोगा—"पत्ता एक न खड़के।
इस सूरत को, पर मनुष्य क्या, देख भैंस भी भड़के ॥

बाबू बन कुर्सी पर बैठूँ तो मनहूस कहाऊँ।
सोच रहा हूँ क्या बन जाऊँ तो अति आदर पाऊँ ॥

करता बहस कचहरी में जा यदि वकील बन जाता।
मगर कहोगे झूठ बोलकर मैं हूँ माल उड़ाता ॥
बन सकता हूँ वैद्य-डाक्टर पर यह सुन भय खाता।
"लोग पड़ें बीमार यही हूँ मैं दिन रात मनाता।"

बनूँ राजदरबारी तो फिर चापलूस कहलाऊँ।
सोच रहा हूँ क्या बन जाऊँ तो अति आदर पाऊँ ॥

नहीं चाहता ऊँची पदवी बन सकता हूँ ग्वाला।
मगर कहेंगे लोग दूध में कितना जल है डाला ॥

बनिया बन कर दूँ दुकान का चाहे काढ़ दिवाला ।
लोग कहेंगे पर—कपटी कम चीज तौलनेवाला ॥

मुफ्तखोर कहलाऊँ साधू बन यदि हरिगुन गाऊँ ।
सोच रहा हूँ क्या बन जाऊँ तो अति आदर पाऊँ ॥

नेता खा लेता है चन्दा लगते हैं सब कहने ।
धोबी पर शक है—यह कपड़े सदा और के पहने ॥
मैं सुनार भी बन सकता हूँ गढ़ सकता हूँ गहने ।
पर मुझको तब चोर कहेंगी आ मेरी ही बहनें ॥

कुछ न करूँ तो मा के मुख से भी काहिल कहलाऊँ ।
सोच रहा हूँ क्या बन जाऊँ तो अति आदर पाऊँ ॥

डाकू से तुम दूर रहोगे है बदनाम जुआरी ।
लोग सभी निर्दयी कहेंगे जो मैं बनूँ शिकारी ॥
बिना ऐब के एक न देखा ढूँढ़ा दुनिया सारी ।
बचो ! मेरा प्रश्न बताओ काटो चिन्ता भारी ॥

दोष ढूँढ़ना छोड़ कहो तो गुण का पता लगाऊँ ।
सोच रहा हूँ क्या बन जाऊँ तो अति आदर पाऊँ ॥

सो जा गुड़िया

(१)

सूरज डूबा निकले तारे ।
घर के बिछे बिछौने सारे ॥
सो जा गुड़िया सो जा रानी ।
आज कहूँगी नहीं कहानी ॥

(२)

जैसे मा है मुझे सुलाती ।
थपकी दे दे लोरी गाती ॥
वैसे तुझे सुलाऊँगी मैं ।
गीत निराले गाऊँगी मैं ॥

(३)

आँख फाड़ क्या देख रही है ।
गुपचुप क्या तू लेख रही है ॥
क्या कानों की बाली मेरे ।
लेने की है मन में तेरे ॥

(४)

ओहो अभी न ऐसा हठ कर ।
रात हुई, है चोरों का डर ॥
होने तो दे जरा सवेरा ।
गहने ढँक देंगे तन तेरा ॥

(५)

घड़ी देख तो दस बजता है ।
असमय में कोई सजता है ॥
सुन तो क्या कहते हैं दादा ।
ठीक नहीं है जगना ज्यादा ॥

————

एक तरंग

एक तरंग हृदय में आई
बुद्ध रूप गौतम ने धारा ।
एक तरंग हृदय में आई
मीरा ने रनवास बिसारा ॥

एक तरंग हृदय में आई
जहर पी गई कृष्ण कुमारी ।
एक तरंग हृदय में आई
कष्ट सहे गांधी ने भारी ॥

× × ×

करते ऐसे काम बड़े जन
दुनिया रह जाती है दंग ।
पर सोचो तो वह है केवल
एक हृदय की एक तरंग ॥

————

जुड़वा की मुसीबत

एक साथ जन्मे हम दोनों
मैं औ मेरा भाई ।
किन्तु शकल सूरत मिलने से
बेहद आफत आई ॥
मैं हूँ कौन ? कौन है भैया,
समझ न कोई पाता ।
जाता यदि वह नहीं मदरसे
तो मैं ही पिट जाता ॥
भाई का ले नाम मुझे थे
घर के लोग बुलाते ।
पड़ता वह बीमार—दवाई
लेकिन मुझे पिलाते ॥
धोखे में आ मात पिता ने
भी की भूल घनेरी ।
भाई से ब्याहा उसको
जो होती दुलहिन मेरी ॥
क्या बतलाऊँ मुसीबतें
क्या पड़ीं शीश पर पटपट ।
भाई जब मर गया मुझी को
लोग ले गए मरघट ॥

———

सहेली

उठ उठ चतुर सुजान सहेली
अपने को पहचान सहेली

गहने धर दे अलमारी में
छिदा न नाहक कान सहेली

तेरी सेवा का भूखा है
सारा हिन्दुस्तान सहेली

मूरख बन कर बैठ न घर में
पड़ी न रह दिन भर बिस्तर में

सुन तो क्या कहता है भैय्या
चल-चल मेरे साथ समर में

रख भैय्या का मान सहेली
अपने को पहचान सहेली

———

उपटन-तेल

(१)

सब लड़कों को लगता उपटन,
सब लड़कों को लगता तेल।
सब लड़के रोते हैं लेकिन
मेरा मुन्ना करता खेल।

(२)

मैं मुन्ना को चित्त लिटा कर,
मैं मुन्ना को पट्ट लिटा कर,
उपटन तेल लगाया करती,
गाया करती गीत मनोहर।

(३)

मैं मुन्ना के हाथ पकड़ कर
मैं मुन्ना के पाँव पकड़ कर
तेल लगा कर खींचा करती
रग रग में देती हूँ बल भर।

(४)

मैं मुन्ना का मन बहलाऊँ,
मैं मुन्ना को दूध पिलाऊँ,
उपटन तेल लगाकर मुन्ना,
बली बने मैं बलि बलि जाऊँ।

———

श्रीनाथसिंह-लिखित

बालक बालिकाओं के पढ़ने योग्य मजेदार पुस्तकें :-

१ - गरुड़ कन्या और अन्य कहानियाँ	४० नया पैसा
२ - दो कुबड़े और अन्य कहानियाँ	४० नया पैसा
३ - अनोखी यात्राएँ (कहानियाँ)	४० नया पैसा
४ - तीन दुमकटों की कहानी	४० नया पैसा
५ श्री गणेश और अन्य कहानियाँ	५० नया पैसा
६ - खेल घर (मजेदार तुक बन्दियाँ)	४० नया पैसा
७ - बाल-गीत (मजेदार तुक बन्दियाँ)	२५ नया पैसा
८ - गाँधी जी (पद्यमय संक्षिप्त जीवनी)	२५ नया पैसा

नोट - इन पुस्तकों को अपने बुकसेलरों से मांगिए न मिले तो सीधा हमें लिखिये।

पता - दीदी कार्यालय
सुभाषनगर, इलाहाबाद-२